Jai Maa Saraswati Gyandayini
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed)
Journal home page: www.jmsjournals.in, **ISSN: 2454-8367**
Vol. 08, Issue-III, Jan. 2023

महाकवि कालिदास के खण्डकाव्यों में दार्शनिक चित्रण

(Philosophical Illustration in the Khandakavyas of Mahakavi Kalidas)

Shashi Rajpoot[a,*] **Dr. S. S. Gautam**[b,**]

[a] *Ph.D. Scholar (Sanskrit), Govt. P.G. College, Datia, Jiwaji University Gwalior, Madhya Pradesh,(India).*

[b] *Professor, Govt Chhatrasal College, Pichhore, Jiwaji University Gwalior, Madhya Pradesh,(India).*

KEYWORDS

महाकवि कालिदास, महाकालेश्वर मंदिर, कालिदास जी भूगोलवेत्ता, कालिदास के खण्डकाव्य, मेघदूत

ABSTRACT

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवियो में से एक है। उनकी रचनाओं को विश्व की महानतम् रचनाओं में स्थान प्राप्त है। उन्होंने कुल सात रचनाओं का सृजन किया है, जो कि अद्वितीय है। उन्होंने तीन नाटक, दो महाकाव्य तथा दो खण्डकाव्यों की रचना की है। इन्होंने अपनी रचनाओं में जीवन के प्रत्येक पहलु पर प्रकाश डाला है। कालिदास के खण्डकाव्यों में हमें जीवन के अनेक दर्शनों का चित्रण मिलता है। कालिदास जी एक अच्छे भूगोलवेत्ता थे। उनके खण्डकाव्य मेघदूत में हमें भारत की भौगोलिक जानकारी प्राप्त होती है। मेघदूत में नायक के द्वारा मेघ को बताए गए मार्ग के माध्यम से भारत की भौगोलिक स्थिति का वर्णन किया गया है। उज्जैन के महाकालेश्वर मंदिर के माध्यम् से बादल द्वारा शैव दर्शन का चित्रण किया गया है। उनके खण्डकाव्यों में जीवन दर्शन, भौगोलिक दर्शन, शैव दर्शन के साथ–साथ अन्य दर्शनों का ज्ञान भी प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम् से महाकवि कालिदास के खण्डकाव्यों में वर्णित दर्शनों को समझाने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना

महाकवि कालिदास को संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवियों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। उन्होंने अनेक नाटकों, महाकाव्यों तथा खण्डकाव्यों की रचना की जो कि संस्कृत साहित्य में उनके योगदान का अद्वितीय उदाहरण हैं। उनकी रचनाओं को सम्पूर्ण विश्व में पढा जाता है। इनकी रचनाओं का अनेक भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है, जो कि इनकी लेखनी को साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान करता है। महाकवि कालिदास ने तीन नाटक, दो महाकाव्य तथा दो खण्डकाव्यों (गीतिकाव्यों) की रचना की है। कालिदास के खण्डकाव्यों में मेघदूत तथा ऋतुसंहार को शामिल किया जाता है। इन्हें गीतिकाव्य भी कहा जाता है।

खण्डकाव्य की विशेषता

खण्डकाव्य उसे कहा जाता है जब कोई निजी विचारों या भावनाओं को कविता के रुप में प्रकट करता है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व व उसकी आन्तरिक एवं बाह्य अनुभूतियों को भाषा के रुप में दर्शाने की क्षमता रखता है। इसमें व्यक्ति के भाव तथा अनुभूति गीत के माध्यम् से प्रकट होती है। इस प्रकार खण्डकाव्य के तीन प्रधान लक्षण होते है।

- रागात्मकता
- निजीपन
- अनुभूति की प्रधानता

दूसरे शब्दों में हम इन्हें गेयत्व, रसानुभूति का भाव तथा कोमल भाव की सघनता भी कह सकते है।

महाकवि कालिदास के खण्डकाव्यों में हमें रोचक कविताओं के साथ–साथ अनेक दर्शनों का भी विवरण मिलता है। कालिदास के खण्डकाव्य मेघदूत को दो भागों में बांटा गया है। प्रथम भाग को '**पूर्वमेघ** तथा' द्वितीय भाग को '**उत्तरमेघ**' कहा गया है। इन दोनो ही भागों में हमें अनेक दर्शनों का वर्णन मिलता है। जो कि इस प्रकार है।

भौगोलिक दर्शन

इसे मेघमार्ग भी कहा जाता है। मेघदूत में महाकवि कालिदास ने रामगिरि से लेकर अलकापुरी तक के मार्ग का चित्रण किया गया है। यह महाकवि कालिदास के भौगोलिक ज्ञान को प्रकट करता है। मेघदूत में वर्णित रामगिरि वह स्थान है जहाँ पर नायक अपने विरह के दिन व्यतीत करते है। यहीं से नायक मेघ को अपनी नायिका के

Corresponding author
***E-mail:** shashirajpootji00@gmail.com (Shashi Rajpoot). https://orcid.org/0000-0003-1792-3410
***E-mail:** ssgautam1967@gmail.com (Dr. S. S. Gautam). https://orcid.org/0000-0003-0148-3692

DOI: https://doi.org/10.53724/jmsg/v8n3.04
Received 15th Nov. 2022; Accepted 15th Dec. 2022; Available online 30th Jan. 2023

2454-8367 /©2023 The Journal. Publisher: Welfare Universe. This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

पास संदेश ले जाने कि याचना करता है। इसी संदर्भ में वह अलकापुरी मार्ग का वर्णन करता है।

मेघदूत में वर्णित मार्ग की भौगोलिक स्थिति के विषय में बताते हुए लिखा गया है कि हे मेघ तुम रामगिरि से उत्तर की ओर मुख करके आकाश मार्ग से होकर आगे बढ जाओं इसके बाद तुम मालवा क्षेत्र से होते हुए रेवा नदी को पार कर दशार्ण प्रदेश तक उत्तर की ओर बढते जाना। इससे प्रतीत होता है कि रामगिरि की स्थिति निश्चित रुप से इन स्थानों से दक्षिण की ओर रही होगी परन्तु विद्वानो का इस पर एक मत नही है। कुछ विद्वान् रामगिरि पर्वत को रामगढ़ की पहाड़ियों के बीच छोटा नागपुर के समीप बताते है, परन्तु यह मेघदूत में बताई गई रामगिरि की स्थिति से मेल नही खाता है। कुछ विद्वान चित्रकूट को रामगिरि पर्वत मानते है, परन्तु उनका विचार भी सर्वमान्य नही है क्योंकि विद्वान मानते है कि चित्रकूट पर श्री राम द्वारा निवास अवश्य किया गया परन्तु ये निश्चित नही है कि वे पूरे वनवास काल में चित्रकूट में रहें होंगे। अंत में सभी विद्वान रामगिरि को रामटेक पहाडी के रुप में मानते है जो कि नागपुर से उत्तर–पूर्व में कुछ मील की दूरी पर स्थित है। इसलिए आज के रामटेक को ही उस समय का रामगिरि माना जाता है। यहाँ से मेघ का उत्तरी मार्ग भी काव्य अनुसार ठीक बन जाता है। यहाँ प्रायः वे सभी विशेषतायें भी मिल जाती है। जिन्हें यक्ष ने बतलाया है, क्योंकि इस पहाड़ी पर अब भी एक सरोवर है जहाँ भगवती जानकी ने स्नान कर उसे पवित्र बना दिया होगा। इस पहाड़ी पर राम, सीता, लक्ष्मण की मूर्तियों वाले अनेक मंदिर भी हैं।

आगे यक्ष कहता है कि इस पर्वत का आलिंगन कर और इससे विदा लेकर तुम सीधे उत्तर की ओर चलोगे तो सर्वप्रथम तुम्हें माल क्षेत्र मिलेगा। **''सद्यः सीरोत्कषणसूरभि क्षेत्रमारूह्य मालम्, किंचित् पश्चात् व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण''** (पू॰मे॰1) संभवतः मालवा का पठार जो कि एक मैदानी क्षेत्र है, मेघदूत में इसी मालारव्य पठार का उल्लेख किया गया है, यह नर्मदा घाटी के आम्रकूट पर्वत और रामगिरि के मध्य में फैला हुआ था।

आगे यक्ष कहता है कि इसके बाद ही उत्तर की ओर आम्रकूट पर्वत मिलेगा, जिस पर तुम विश्राम कर सकते हो **''बक्ष्यत्मध्वश्रमपरिगतं सानुमानाम्रकूटः''**(पू॰मे॰17) कवि ने 17, 18, 19 इन तीन श्लोकों में इस आम्रकूट पर्वत का वर्णन किया है। विद्वान आम्रकूट को विन्ध्याचल के सतपुडा पर्वत से दक्षिण–पूर्व की ओर स्थित पर्वत श्रृंखलाओं को मानते है।

इसके बाद उत्तर की ओर जाते हुए मेघ को विन्ध्यपाद अर्थात् विन्ध्याचल का दक्षिणी प्रदेश जो सतपुडा पर्वत माला के नाम से प्रसिद्ध हैं, पर फैली हुई रेवा अर्थात् नर्मदा नदी मिलेगी, यह नर्मदा विन्ध्यपाद की ऊँची–नीची चट्टानों पर बह रही होगी।**''रेवा द्रक्ष्यस्युतलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्''** (पू॰मे॰19) रेवा या नर्मदा नदी का भारत की पवित्र नदियों में स्थान हैं। यह नदी अमरकण्टक की मेकल श्रेणियों से निकल पर पश्चिम की ओर लगभग 1000 मील तक बहकर भड़ौच के पास एक खाड़ी में गिरती हैं। सम्भवतः इसीलिये रेवा का दूसरा नाम मेकल कन्यका भी है।

यक्ष कहता है कि तुम इस नदी से जल भरकर आगे बढ़ना। आगे आने वाले पर्वतों पर तुम विश्राम करके कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते''। जब तुम और आगे बढ़ोगे तो दक्षार्ण प्रदेश में पहुँचोगे। दशार्ण–रामायण किष्किन्धा काण्ड के अनुसार तो यह एक नगर का नाम प्रतीत होता है, पर यह कवि कालिदास के अनुसार यह एक राज्य ही था जिसकी राजधानी विदिशा आधुनिक भिल्सा थी। मेघदूत के 25 वें श्लाक में कालिदास ने विदिशा का वर्णन किया है

तेषां दिक्षु प्रथितविदिशाशालक्षणां राजधानीं,
गत्वा सद्यः फलमविकलं कामुकत्वस्य लब्धा।
तीरोपान्तस्तनितसुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात
सभ्रूभंगम् मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि।।

आगे यक्ष कहता है कि वेत्रवती तथा विदिशा पार करके तुम नीचैः नामक पर्वत पर पहुँचोगे **''नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्राम हेतोः''**। इस उल्लेख से ऐसा प्रतीत होता है कि यह कोई छोटी पहाड़ी रही होगी और विदिशा के समृद्व नागरिक यहाँ विलास–क्रीड़ा के लिए आते होंगे। अतः विद्वानों का मानना है कि ग्वालियर सम्भाग के अन्तर्गत उदयगिरि पहाड़ी का ही कोई छोटा भाग रहा होगा।

आगे इसके बाद यक्ष कहता है कि अब उसे कुछ टेढ़ा मार्ग अपनाना पड़ेगा जिससे कि वह उज्जयिनी का दर्शन कर सकें। ''वक्र पन्था पदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां सौधोत्संग प्रणय–विमुखी मास्म भ्रूरूनयिन्याः वन नदी'' को पारकर यक्ष के आग्रह के अनुसार यदि मेघ उज्जयिनी को जाता है। जन–श्रुतियों के आधार पर कालिदास के आश्रयदाता यहीं के निवासी थे, अतएव कालिदास इससे चिर–परिचित प्रतीत होते हैं। उज्जयिनी, निर्विन्ध्या नदी के पूर्व भाग में दूरी पर स्थित थी। इसलिए मेघ को निर्विन्ध्या नदी को पार करना पड़ा है। मेघ मार्ग की दृष्टि से यह उज्जैन और दशपुर मन्दसौर के बीच में पड़ता है। आगे यक्ष कहता है कि जब तुम यहाँ से आगे चलोगे तो तुम्हें चर्मण्वती (चम्बल) नदी मिलेगी। **''ब्यालम्बेथाः सुरभितनयालम्भजां मानयिष्यन्''**। (48)

चर्मण्वती या चम्बल नदी, यमुना नदी की मुख्य सहायक नदियों में एक प्रसिद्ध नदी है।

इसके बाद मेघ ब्रह्मावर्त प्रदेश को पार करता हुआ कुरूक्षेत्र पहुँचेगा और सरस्वती नदी के जल का पान कर अपने को पवित्र बनायेगा। **''ब्रह्मावर्तं जनपद मथच्छायया गाहमानः क्षेत्रं क्षत्रप्रधनपिशफनं कौरव तद् भजेथाः''**(51) कुरूक्षेत्र इसी ब्रह्मावर्त का ही एक विशाल भूभाग है जहाँ कि कौरव पाण्डवों का युद्ध हुआ था। इसके बाद मेघ को कनखल (हरिद्वार के पास) नामक पर्वत के सहारे गंगा की ओर जाता है। कनखल–हरिद्वार के समीप गंगा के पश्चिमी तट पर यह एक प्रसिद्ध स्थान है जो कि प्राचीनकाल में तीर्थस्थान माना जाता रहा होगा। किन्तु मल्लिनाथ के कनखल को एक पर्वत माना है जिसका आधार सम्भवतः महाभारत का यह श्लोक है 'एते कनखला राजन् ऋसीणां दयिता नगाः'। हो सकता है कि प्राचीन काल में यहाँ कोई पहाडी हो। आगे यक्ष कहता है कि इस प्रकार गंगा नदी पर पहुँचकर पुनः तुम गंगा के उत्पत्ति स्थान हिमालय पर पहुँचना और उसके श्रृंग पर बैठकर कुछ क्षण विश्राम करना। **''तस्या एव प्रभव मचलं प्राप्य गौरं तुषारैः''** (55) इसके बाद यक्ष कहता है कि हे मेघ! यहाँ से तुम हिमालय पर्वत के छोर पर स्थित विशेष स्थानों को देखते हुए, मानसरोवर को जाने के लिए हंसों के प्रवेश द्वार 'कौंचरन्ध्र' पर पहुँचना। यहाँ से फिर मेघ को उत्तर की ओर चलकर कैलास पर्वत पर पहुँचना है। जहाँ पर वह मानसरोवर से जल ग्रहण कर सकता है (65) इसी कैलास पर्वत के अंक में बसी हुई अलकापुरी को वह देख सकेगा जो कि उसका गन्तव्य स्थान है और जहाँ पर उसे यक्षिणी को सन्देश देना है

''तस्योत्तङ्.गे प्रणयिन इव स्रस्तगङ्.गादुकूलां न त्वं दृष्ट्वा न पुनरलकां शास्यते कामचारिन्''।(66)

इस प्रकार कवि ने रामगिरि से लेकर अलकापुरी तक के मार्ग का पूर्व मेघ में वर्णन किया है। कवि के इस वर्णन से जहाँ उनके सूक्ष्म प्रकृतिनिरीक्षण का परिचय मिलता है वहाँ पर यह ज्ञात भी होता है कि कवि को रामगिरि से अलका तक के भौगोलिक विस्तार का सूक्ष्म ज्ञान था। मानो उन्होंने स्वयं इन स्थानों को अपनी आँखों से देखा हो। इस मार्ग के बीच आने वाले पर्वतों, नगरों, नदियों आदि का परिचय भी दिया है। इस मार्ग के प्राकृतिक मनोहारी दृश्यों का भी वर्णन है।

शैवदर्शन

महाकवि कालिदास के खण्डकाव्यें में हमें शैवदर्शन का भी चित्रण मिलता है। शिव तत्व सर्वशक्तिमान समष्टि भाव का मूल तत्व है। अतः मेघदूत के अनुसार विषपान के कारण शिवजी का कण्ठ नीला है। अतः वे नीलकण्ठ या कण्ठकाल कहे जाते है। मेघदूत में शिवजी को पुज्य मानकर उनकी पूजा की गई है तथा उन्हें महादेव कहा गया है। मेघदूत में उज्जैन नगर का वर्णन करते हुए बताया गया है कि महाकालेश्वर के मन्दिर के होने से विशाला नगरी न केवल एक पवित्र तीर्थस्थान है। महाकालेश्वर मन्दिर में जाकर मेघ को क्या करना है, इसी बात को प्रस्तुत श्लोक में बतलाया गया है–

''अप्यन्यस्मिज्जलधर महाकालमासाद्य काले,
स्थातव्यं ते नयनविषयं यावदत्येति भानुः।
कुर्वन संध्यावलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीया
मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्''।।

इस श्लोक में बताया गया है कि महाकाल मन्दिर में पहुँचकर तुम्हें तब तक ठहरे रहना चाहिये जब तक कि सूर्य दृष्टिपथ से ओझल होता है, अर्थात् अस्त होता है (क्योंकि संध्याकाल) शिवजी की प्रशंसनीय संध्याकालीन पूजा में नगाड़े की ध्वनि क्रिया को करते हुये (तुम अपने गम्भीर गर्जनों के सम्पूर्ण फल को प्राप्त करोगे) इसमें अद्वैतकारी दर्शन की अत्चुच्चता भक्ति भाावना सम्पूर्णता से जोड़ती है। लोकधर्म का स्वरूप दार्शनिक पृष्ठभूमि पर प्रभावशील होंता है।

महाकाल–शब्द का प्रयोग उज्जयिनी के शिवजी के मंदिर एवं उसमें स्थापित शिवमूर्ति, दोनों के लिए होता है। यह उज्जयिनी के महाकाल या महाकालेश्वर द्वादश ज्योतिलिंगों में से एक है।

यक्ष कहता है कि न केवल महाकालेश्वर से ही तुम्हें गर्जन का फल प्राप्त होगा, अपितु तुम्हें अन्य फल भी प्राप्त होगा–

''पादन्यासैः क्वणितरशनास्तत्र लीतावधूतं,
रत्नच्छायाखचितवलिभिश्चामरैः क्लान्तहस्ताः।
वेश्यास्त्वतो नखपदसुखान् प्राप्य वर्षाग्रविन्दू,
नामोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्।।

वहाँ संध्या के समय, पैरों के रखने से बजती हुई करधनियों वाली (तथा) विलास पूर्वक हिलाए जाते हुए रत्नों की कान्ति से प्रकाशित दण्डों वाले चँवरों से थके हुए हाथों वाली वेश्यायें तुमसे नखक्षतों को आराम देने वाली वर्षा की प्रथम बूँदों को प्राप्त करके तुम्हारे ऊपर भ्रमर पंक्ति के समान लम्बे कटाक्षों को छोड़ेंगी।

लोक कल्याण और जीवन मूल्य दर्शन

जीवन–मूल्य व्यक्ति के माध्यम से अनुकूल सामाजिक धारणाएं हैं। अतः इनसे सामयिक जीवन–मूल्यों के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया एवं उससे उद्भुत मूल्यों के विकास

की संभावित दिशाओं को भी परख सकते हैं।[21]

स्पष्ट हो जाता है कि साहित्कार की आस्था शाश्वत् मूल्यों में तो रहती ही है परन्तु वह सामयिक मूल्यों के प्रति भी सजग रहता है और अपने विवेक के अनुसार साहित्य में उनका प्रतिपादन भी करता है। परमात्म शक्ति ऋतुओं के प्रभाव से ब्रह्मा के नाना में प्रभावशील होती है। जीवन मूल्यों का प्रकाश उसका कर्म परक ज्ञानमार्ग है।

प्रत्येक समय के साहित्य में जीवन–मूल्यों की प्रतिष्ठा होती रही है परन्तु उनकी प्रतिष्ठा मात्र से ही साहित्य सृजन का कार्य नहीं होता। साहित्य दृष्टि ही नहीं अंतर्दृष्टि भी भी देता है। कालिदास 'प्रकृति' के माध्यम से अखिल विश्व का दर्शन कराते हैं।

साहित्य में सौन्दर्य से अभिप्राय नेत्रों द्वारा सुन्दर दिखाई देने वाले स्थूल तत्वों से नहीं है। सौन्दर्य से अभिप्राय, वह वस्तु या भाव है, जिसमें हमारे मन को मुग्ध करने की पूर्ण सामर्थ्य हो। अतः यदि किन्हीं विशिष्ट अवसरों पर ग्लानि अथवा शोक द्वारा हमारा हृदय द्रवीभूत हो जाता है तो उस समय इन भावों का वह रूप विशेष निश्चय ही सुन्दर कहलाने का अधिकारी है।

डॉ. राजपाल साहित्य में मूल्य के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं, ''साहित्य की पृष्ठभूमि में लोक कल्याण की भावना ही सक्रिय रही है। समय–समय पर मूल्यों में परिवर्तन होने के कारण लोक–कल्याण का स्वरूप बदलते रहने पर भी लोक–कल्याण की कभी उपेक्षा नहीं की जा सकी। साहित्य और समाज का घनिष्ठ संबंध है। साहित्यिक रचनाएं केवल व्यक्ति है। ऋतुसंहार की अंतर्दृष्टि ही आत्मोपलब्धि से आनन्दोपलब्धि करती है। वस्तुतः जीवन–मूल्यों को साहित्य से पृथक नहीं किया जा सकता क्योंकि दोनों का आधारभूत मूल्य आनन्द ही है। उसमें वर्णित ऋतुदर्शन समुच्चय कालसापेक्ष प्रासंगिक है।

अन्ततः कहा जा सकता है कि साहित्य में मूल्य से विस्तृत अर्थ–ग्रहण किया जाता है। सत्य, शिव, सुन्दर आनन्दोपलब्धि प्रमुख साहित्यिक मूल्य हैं, इनका परस्पर गहरा संबंध है। साहित्य को मूल्य से अलग कदापि नहीं किया जा सकता।

'ऋतुसंहार' का प्रकृति दर्शन–

'ऋतुसंहार' कालिदास की प्रथम काव्यकृति है। विद्वानों की दृष्टि में बालकवि कालिदास ने काव्यकला का आरम्भ इसी ऋतु वर्णन परक लघुकाव्य से किया। छः सर्गो में विभक्त यह काव्य ग्रीष्म से आरम्भ कर वसन्त तक छहों ऋतुओं का बड़ा ही स्वाभाविक, अकृत्रिम तथा सरल वर्णन प्रस्तुत करता है, परन्तु इसे कालिदासीय कृति मानने में आलोचकों में ऐकमत्य नहीं है। उनकी दृष्टि में न तो इसमें कालिदास की कमनीय शैली या वाग्वैदग्धी का परिचय मिलता है।

यह कालिदास की प्रामाणिक कृति के रूप में छह सर्गो का गीतिकाव्य है जिसमें ग्रीष्म से प्रारम्भ करके वसन्त तक छहों ऋतुओं का श्रृंगारमय वर्णन है। इसमें 144 पद्य हैं। कालिदास की अन्य कृतियों के समान इसमें परिष्करण नहीं हे। इससे कुछ विद्वान् इसकी प्रामाणिकता (कालिदास की रचना होने) पर सन्देह व्यक्त करते हैं किन्तु बहुसंख्यक विद्वानों का मत है कि यह उनका तरूण प्रयास था। अतएव 'उच्चाशयता तथा अभिव्यक्ति की चारूता' का इसमें अभाव है। रचना की प्रौढ़ि न होने पर भी 'ऋतुसंहार' का विशिष्ट महत्व है क्योंकि संस्कृत भाषा में ऋतुओं के संर्वागपूर्ण सौम्यवर्णन पर यह एकमात्र काव्य हैं। प्रेमी–प्रेमिका के विलास की दृष्टि से ऋतुओं का हृदयहारी वर्णन कवि ने किया है। इसका आरम्भ ग्रीष्म की प्रचण्डता के वर्णन से[24] और अन्त वसन्त के मादक सौन्दर्य के चित्रण से हुआ है। वसन्त के आने पर कवि की दृष्टि में सभी पदार्थ सुन्दरतर हो जाते हैं

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं, स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः, सर्वं प्रिये चारूतरं वसन्ते।।

इस काव्य की भाषा सरल और स्वाभाविक प्रवाह से पूर्ण है। कवि ने अनुप्रासयुक्त पद विन्यास किया है। पद्यों में मुक्तक काव्य की छटा है, यद्यपि वे नायक के द्वारा नायिका को सम्बोधित होने के कारण परस्पर बँधे हुए हैं। सरलता और सहजगम्य होने के कारण मल्लिनाथ जैसे टीकाकार ने इस पर टीका नहीं लिखी। कवि के तरूण प्रयास के कारण इसमें काम–वृत्ति का आदर्शोन्मुख परिष्कार भी नहीं है, सम्भवतः इसीलिए समीक्षकों ने इस काव्य के उद्धरण काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में नहीं दिये हैं। फिर भी इसमें कल्पना शक्ति और पद–शया के चमत्कारी उदाहरण मिलते हैं। शिशिर–वर्णन में कवि कहते हैं कि इस ऋतु में अब न तो किसी चन्द्रमा की किरणों से शीतल किया हुआ चन्दन का लेप अच्छा लगता है, न शरद् की चन्द्रमा के समान उजली छतें अच्छी लगती हैं और न घनी ओस से शीतल वायु ही किसी को भाता है

न चन्दनं चन्द्रमरीचिशीतलं, न हर्म्यपृष्ठं शरदिन्दुनिर्मलम्।
न वायवः सान्द्रतुषारशीतला, जनस्य चित्तं रमयन्ति साम्प्रतम्।।

ऋतुसंहार में मानव और प्रकृति दोनों का चित्रण उनके उद्दीपक रूप में हुआ है। शरद् ऋतु के वर्णन में कालिदास ने रूपकों का विपुल प्रयोग किया है, प्रकृति की

उपमा मानव से और मानव की उपमा प्रकृति से दी है जैसे

चंचन्मनोज्ञ–शफरी–रशनाकलापाः
पर्यन्त–संस्थित–सिताण्डज–पङ्क्तिहाराः।
नद्योविशालपुलिनान्त–नितम्बबिम्बा मन्दं प्रयान्ति समदाः
प्रमदा इवाद्य।।

अर्थात् इस शरद् ऋतु में नदियाँ उसी प्रकार धीमे–धीमे बह रही हैं, जैसे कमरधनी और माला पहने हुए बड़े नितम्बों वाली कामिनियाँ जा रही हों; उछलती हुई शफरी मछलियाँ उन नदियों की कमरधनी हैं, तट पर बैठे श्वेत पक्षियों की पंक्तियाँ मालाएँ हैं तथा ऊँचे–ऊँचे रतीले टीले उनके नितम्ब हैं। शरद् वर्णन के आरम्भ और अन्त दोनों स्थलों पर कवि ने कामिनी रूपक दिया है।

प्रकृति उद्दीपन

ऋतुसंहार में कवि के सामने प्रकृति है और है कामिनी। कामिनी किंवा अपनी 'प्रिया' के साथ कवि प्रकृति का आनन्द ले रहा है और उसे भाँति भाँति से देखता है। देखता ही नहीं देखने के लिए लालायित भी करता है।

'वसन्तयोद्धा' की कृपा से अनग विजयी हुआ। 'प्रवासी' की दशा का उल्लेख भी हृदयद्रावी है। कवि की दृष्टि कभी उसकी उपेक्षा नहीं करती। सच तो यह है कि इस संयोग में जो वियोग की बिजली कौंध जाती है वही मेघदूत के मेघ को सामने लाती और कवि की लेखनी से रस धारा बरसाती है। वर्षाऋतु की दशा तो यह है

तडिल्लताशक्रधनुर्विभूषिताः पयोधरास्तोयभरावलम्बिनः।
स्त्रियश्च कांचीमणिकुणलीज्ज्वला हरन्ति चेतो
युगपत्प्रवासिनाम्।।

उधर प्रोषितपतिका की सुधि भी कवि को कॅपा रही है। हेमन्त और शिशिर में कवि **'हर्म्य'** में ही मग्न दिखाई देता है और 'शीत' के कारण जैसे बाहर झॉकना ही नहीं चाहता। प्रकृति की बात थोड़े में कह कर 'घर' में लीन हो जाता है और विलासिनी–विलास में मग्न रहता है। किन्तु इस काल में भी जब बहार दृष्टि पड़ती है तक प्रकृति मन को अपनी ओर खींच ही लेती हैं।

'ग्राम' का जो रूप 'प्रिया' के साथ 'प्रिय' को माया है कि उसकी झलक भर दिखा दी गई है। उसमें 'गृहस्थी' का वर्णन नहीं। चाहे गृहस्थ का भले ही हो। 'प्रमदा', 'कामिनी' और 'विलासिनी' ही कवि को इष्ट है कुछ आर्या, गृहिणी और भार्या नहीं। तो भी ध्यान सदा घर में ही रहा है, निकुंष में नहीं। 'अभिसारिका' और 'खंडिता' का वर्णन भर कर दिया गया है। उनमें कवि का उल्लास नहीं, उद्दीपन भले ही हो।

ग्राम के विलास से दृष्टि फिरी और 'उपवन' पर पड़ी तो कवि–हृदय और ही रंग में रग गया और बरबस बोल पड़ा

कुन्दैः सविभ्रमवधूहसितावदातै–रूदयोतितान्युपवनानि
मनोहराणि।
चित्तं मुनेरपि हरन्ति निवृत्तरागं प्रागेव रागमलिनानि मनांसि
यूनाम्।।

दार्शनिक मीमांसा

ऋतुसंहार की मीमांसा तब तक अधूरी ही समझी जायेगी जब तक उसके 'ग्राम' 'उपवन' और वनान्त' का ठीक ठीक पता नहीं हो जाता। यदि ध्यान से देखा जाय तो ऋतुसंहार में 'सीमान्त', 'वनान्त' और 'उपवन' का उल्लेख भी प्रायः हुआ है और आदि का वर्णन भी नदी के साथ ही जहाँ–तहाँ पाया गया है।

कालिदास की प्रतिमा किस ग्राम में मुखर हुई है उसकी एक झाँकी लीजिए और 'सीमान्त' की स्थिति को समझिए। 'शालि', 'गोकुल' और 'हंस' को उपलक्षण मात्र समझिए। 'शालि', 'गोकुल' और 'हंस' को उपलक्षण मात्र समझिए। यह तो ऋतु विशेष का दृश्य है न, धन–धान्य से परिपूर्ण, स्वस्थ, सुन्दर और पुष्ट पशुओं से पूर्ण, हंस और सारस जैसे मनोहर पक्षियों से निनादित किसी गाँव का दृश्य फिर कब इन ऑखों को मिलेगा। ध्यान दीजिए, 'प्रचुरगोकुल' भी गाँव में नहीं, प्रत्युत गाँव के बाहर सीमान्त में विराज रहा है, ओर अपनी स्वास्थता के साथ आप का स्वास्थ्य बना रहा है। 'शरत्' में 'सीमान्त' की जहाँ वह शोभा थी, 'हेमन्त' में वही यह हो गई

प्रभूतशालिप्रसवैश्रितानि मृगांगनायूथविभूषितानि।
मनोहरक्रौंचनिनादितानि सीमान्तराण्युत्सुकयन्ति चेतः।।

ऋतुपरिवर्तन के साथ परिस्थिति में भी परिवर्तन हो गया। 'गोकुल' को कहीं अन्यत्र, शरण मिली और वह स्थान मृगवधू को मिल गया। शीत से बचाव का उपाय हो गया। कैसी सुन्दर है गॉव की यह व्यवस्था जो मृगी भी सीमान्त में सुख से रहती है। इसके पहले उसका निवास था 'उपवन'। देखिए 'शरत्' के वर्णन में कवि लिखता है

शेफालिकाकुसुमगन्धमनोहरणि
स्वस्थस्थिताण्डजकुलप्रतिनादितानि।
पर्यन्तसंस्थितमृगीनयनोत्पलानि प्रोत्कण्ठयन्त्युपवनानि मनांसि
पुसाम्।।[40]

जो जहाँ है 'स्वस्थ' है, यही इस देश की विशेषता है। पशु–पक्षि सभी सानन्द हैं। 'उपवन' से आगे बढ़ जाब हम वन पर दृष्टि डालते हैं तब ओर ही दृश्य दिखाई देता हैं। ग्रीष्म में यहाँ 'मृग' की दशा यह है–

मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्कतालवः।
वनान्तरे तोयमिति प्रधाविता निरीक्ष्य भिन्नाञ्जनसन्निभं नभः।।

किन्तु वर्षाकाल में 'वन' की शोभा कुछ और ही हो जाती है

मुदित इव कदम्बैर्जातपुष्पैः समन्तात्पवनचलिशाखैः
शाखिभिर्नृत्यतीव। हसितमिव विधत्ते सूचिभिः केतकीनां
नवसलिलनिषेकच्छिन्नतापो वनान्तः।।

इस 'वनागत' का वर्णन पहले भी कुछ आ गया है और इसकी 'दवाग्नि' की चर्चा मेघदूत में भी है। यह 'वनान्त' जिस शैल का है उसको इस जन ने 'आम्रकूट' माना है और कुछ वह दिखाने का उद्योग भी किया है कि यही वास्तव में कवि का निवास स्थान है। इस 'दवाग्नि' का वर्णन इतना सजीव है कि कवि ने इसका रूप सा खड़ा कर दिया। इसे केवल परम्परा का पालन नहीं कह सकते। इसमें कवि का प्राण भी है। देखते हैं उसका पूरा परिपाक विन्ध्य की उपत्यका में पाते है। कालिदास की 'प्रिया' को प्रकृति में कितना रस मिलता है इसका अनुमान तो किया जा सकता है पर प्रवचन नहीं। कारण यहाँ वह मौन है।

ऋतुसंहार के षट् सर्गो में क्रमशः ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर तथा वसन्त ऋतु का गीत्यात्मक स्वरों में वर्णन हुआ। ऋतुयें साक्षात् दर्शन विशेष की परिचायक है ये मानव जीवन दर्शन को सहज एवं सौम्य बनाती है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि महाकवि कालिदास के खण्डकाव्यों में हमे अनेक दर्शनों का चित्रण मिलता है। कालिदास के दोनो खण्डकाव्यों में जीवन के प्रत्येक दर्शन का वर्णन किया गया है। मेघदूत में कालिदास ने मेघ के माध्यम से जीनव के प्रत्येक दर्शन को उजागर करने का काम किया है। ठीक इसी प्रकार ऋतुसंहार में भी कालिदास ने सभी प्रकार के दर्शनों का चित्रण किया है। जो कि मानव जीवन के विकास के लिए अति आवश्यक है। भौगोलिक दर्शन के द्वारा भारत की भौगोलिक स्थिति का वर्णन किया है। धर्मदर्शन के माध्यम् से शैव धर्म का वर्णन किया गया है। कालिदास के खण्डकाव्यों में जीवन दर्शन का विस्तार से वर्णन किया गया है। कालिदास की रचनाओं में वर्णित दर्शन के माध्यम् से वर्तमान में भी जीवन को सुगम व उन्नत बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूचीः

1. मेघदूतम्–एक परिशीलन, डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, तृतीय संस्करण, 2003
2. मेघदूत (भूमिका) डॉ0 बाबूराम त्रिपाठी, महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा,
3. ऋतुसंहार 3/1 प्रात शस्त्रवधधूरिव रूपरम्या।
   3/28 विकचक्रमलवक्त्रा फुल्लनोलोत्पलाक्षी विकसितनवकाश श्वेतवासो वासना।
   कुमुदरूचिकान्तिः कामिनीवोन्देयं प्रतिदिशतु शरद् वश्चेतसः प्रीतिमग्रयाम्।।
4. ऋतुसंहार–(आधारग्रन्थ)–डॉ. लक्ष्मी प्रपन्नाचार्य चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी सन् 1980
5. साहित्यिक निबन्ध– डॉ. राजनाथ शर्मा, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, 1970
6. मानव मूल्य परक शब्दावली का विश्व कोष (खंड–4) धर्मपाल मैनी (संपा.) (नयी दिल्ली): सरूप एंड सन्त, प्रथम संस्करणः 2005
7. हरमोहन लाला सूद, जहारी प्रसाद द्विवेदी का सर्जनात्मक साहित्य मानवीय मूल्यों का कोष (दिल्लीः निर्मल पब्लिकेशन, 1998)
8. बृहत हिन्दी कोष, कालिका प्रसाद (संपा.), वाराणसीः ज्ञानमण्डल लिमिटेड 1963.
9. मानक हिन्दी कोष 8खण्ड–चार, रामचन्द्र वर्मा (संपा॰),प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेलन 1965
10. हिन्दी विश्वकोष (खण्ड–नौ), रामप्रसाद त्रिपाठी (संपा॰), वाराणसीः नागरी प्रचारिणी सभा, 1967
11. हुकुमचन्द राजपाल, समकालीन कविता में मानव मूल्य, नई दिल्लीः शारदा प्रकाशन, 1993
12. जगदीश गुप्त, नयी कविता, स्वरूप और समस्याएं, वाराणसीः भारतीय ज्ञानपीठ, 1969
13. गोविन्दचन्द्र पाण्डेय, मूल्य मीमांसा, जयपुरः हिन्दी ग्रथ अकादमी, 1975
14. हिन्दी साहित्य कोष (भाग–3), धीरेन्द्र वर्मा (संपा॰) ,प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेन 1964
15. मानक हिन्दी कोष (भाग–3) धीरेन्द्र वर्मा (संपा॰), प्रयागः हिन्दी सम्मेलन, 1964
16. शिवकरण सिंह, आलोचना के बदलते मानदण्ड और साहित्य, इलाहाबादः किताब महल, 1967

****